कुंवरजीत सिंह खंडपुर

बनाम

किरनदीप कौर व अन्य

(2008 की सिविल अपील सं. 2464)

03 अप्रैल, 2008

(डॉ. अरिजीत पसायत और पी. शतशिवम जे.जे)

परिसीमा अधिनियम, 1963- अनुच्छेद 137-प्रोबेट/प्रशासन पत्र प्रदान करने के लिये याचिका-अनुच्छेद 137 की प्रयोज्यता-अभिनिर्धारित किया गयाः ऐसी याचिका पर लागू पर होता है- तथ्यों के आधार पर, 2002 में प्रशासन पत्र प्रदान करने के लिये याचिका दायर की गई, जब वसीयतकर्ता की मृत्यु 1995 में हो गई तो परिसीमा द्वारा बाधित नही था, क्योंकि आवेदन करने का अधिकार वास्तव में 1999 में तब उत्पन्न हुआ, जब प्रोबेट की कार्यवाही वापिस ले ली गई, इसलिये याचिका 3 वर्ष की परिसीमा अवधि के भीतर दायर की गई- भारतीय उत्तराधिकार अधि., 1925-एस.एस.278 और 232।

भारतीय उत्तराधिकार अधि., 1925-एस.278-प्रशासन पत्र प्रदान करने के लिये याचिका की प्रकृति-वसीयत द्वारा बनाये गये विधिक कर्तव्यों को पूरा करने के लिये या वसीयत न्यासी के रूप में मान्यता के लिये न्यायालय की अनुमति प्राप्त करना- यह एक सतत् अधिकार है, जिसका उपयोग मृतक की मृत्यु के पश्चात किसी भी समय किया जा सकता है, जब तक ऐसा करने का अधिकार जीवित रहता है।

दिनांक 09.09.1991 को वसीयतकर्ता ने एक वसीयत निष्पादित की। उसकी मृत्यु दिनांक 05.10.1995 को हो गई। इसके बाद प्रतिवादी सं.5 ने वसीयत के संबंध में प्रोबेट देने के लिये जिला न्यायाधीश के समक्ष याचिका दायर की। हालांकि, उन्होंने 09.08.1999 को याचिका वापिस ले ली। प्रतिवादी सं.1 से 3 को उचित कार्यवाही दायर करने हेतु स्वतंत्रता दी गई। दिनांक 07.08.2002 को प्रतिवादी सं.1 से 3 ने प्रशासन पत्र देने के लिये याचिका दायर की।

अपीलकर्ता ने तर्क दिया कि याचिका परिसीमा विधि द्वारा बाधित थी, क्योंकि यह वसीयतकर्ता की मृत्यु के सात साल बाद दायर की गई थी। जिला न्यायाधीश ने यह अवधारित किया कि वादकारण प्रतिवादी सं.1 से 3 के पक्ष में उत्पन्न हुआ, जब प्रोबेट याचिका दिनांक 09.08.1998 को दायर वसीयत एलओए के अनुवान के लिये याचिका 3 वर्ष की परिसीमा के भीतर थी। उच्च न्यायालय ने जिला न्यायाधीश के आदेश को बरकरार रखते हुये कहा कि परिसीमा अधि. 1963 का अनुच्छेद 137 प्रोबेट/प्रशासन पत्र देने की कार्यवाही पर लागू नही होता है, इसलिये वर्तमान अपील।

अपील को खारिज करते हुये।

1.1 यह अभिनिर्धारित किया कि परिसीमा अधि. 1963 के अनुच्छेद 137 में महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति ''लागू करने का अधिकार'' है। प्रशासन पत्र लागू करने की याचिका पर अनुच्छेद 137 स्पष्ट रूप से लागू होता है। उच्च न्यायालय ने ठीक ही कहा कि ऐसी कार्यवाहियों में आवेदन केवल न्यायालय में कर्तव्य की पालन की मान्यता चाहता है, क्योंकि कार्यवाहियों की प्रकृति के कारण यह एक सतत् अधिकार है। हालांकि, उच्च न्यायालय ने याचिका की प्रकृति का सही वर्णन किया है, लेकिन यह कहना सही नही था कि प्रोबेट या प्रशासन पत्र देने का आवेदन अधिनियम के अनुच्छेद 137 के अंतर्गत नही आता है। (पैरा 14 व 15) (1063-ए-बी; 1064-ए-बी)

1.2 प्रशासन पत्र के अनुदान के लिये आवेदन व वसीयत द्वारा बनाये गये विधिक कर्तव्य को पूरा करने के लिये या एक वसीयतनामा न्यासी के रूप में मान्यता के लिये, न्यायालय की अनुमति के लिये है और यह एक सतत् अधिकार है, जिसका प्रयोग मृतक की मृत्यु के बाद किसी भी समय किया जा सकता है। जब तक ऐसा करने का अधिकार बचा रहता है और न्यास का उद्देश्य मौजूद है या न्यास का कोई हिस्सा, यदि बनाया गया है, निष्पादित किया जाना बाकी है। (पैरा 16 व 17) (1064-ई-एफ;1065-बी)

1.3 तथ्यात्मक परिदृश्य को मद्येनजर रखते हुये आवेदन करने का अधिकार वास्तव में 09.08.1999 को उत्पन्न हुआ, जब प्रतिवादी सं.5 के द्वारा कार्यवाही वापिस ले ली गई थी। चूंकि याचिका तीन साल के भीतर दायर की गई थी, जो समय के भीतर दायर की गई थी, इसलिये अपील निराधार थी। (पैरा 18) (1065-सी)

केरल राज्य विद्युत बोर्ड, त्रिवेन्द्रम बनाम टी.पी. कुन्हालिउम्मा 1976 (4) एससीसी 634 य एस.एस.राठोर बनाम एम.पी.राज्य 1989 (4) एससीसी 582 पर निर्भर।

वासुदेव दौलतराम सदरंगानी बनाम सजनी प्रेम ललवानी ए.आई.आर. 1983 बॉम्बे 268 य एस.कृष्णास्वामी और अन्य बनाम ई.रामैया ए.आई.आर 1991 मद्रास 214 स्वीकृत।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः 2008 की सिविल अपील सं. 2464।

2005 के सिविल पुनरीक्षण सं. 156 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के अंतिम निर्णय व आदेश दिनांक 24.11.2005 से।

अपीलकर्ता की ओर से- संजीव सचदेवा, चेतन चोपडा और सौरव शर्मा।

उत्तरदाता की ओर से - वी. शेखर, एस.गणेश, अभिज्ञा और एन. अन्नपूर्णानी।

डॉ. अरिजीत पसायत जे. द्वारा न्यायालय का निर्णय सुनाया गया।

1. अनुमति दी गई।

2. इस अपील में चुनौती, दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के अपीलकर्ता द्वारा दायर दीवानी पुनरीक्षण याचिका को खारिज करने के फैसल को लेकर है। आक्षेपित आदेश द्वारा एक प्रारंभिक मुद्दे पर निर्णय लेते हुये विद्वान अति. जिला न्यायाधीश द्वारा व्यक्त किये गये विचार का बरकरार रखा। विद्वान अति. जिला न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि वसीयत के प्रशासन के पत्रों के अनुदान के लिये याचिका दिनांक 09.09.1991 को कथित तौर पर स्व.मोहिन्दर सिंह खंडपुर द्वारा निष्पादित की गई थी जो परिसीमा द्वारा बाधित नही थी, चलने योग्य थी।

03. तथ्यात्मक स्थिति को संक्षेप में नोट करने की आवश्यकता है क्योंकि उसमें समाधान के लिये कानून का एक रोचक प्रश्न सम्मिलित है कि कौन से तथ्यात्मक विवरण प्रासंगिक नही है।

04. अपीलकर्ता का मुख्य रूप से यह रूख था कि वसीयतकर्ता मोहिन्दरसिंह खंडपुर की मृत्यु 05.10.1995 को हो गई थी और भारतीय उत्तराधिकार अधि. की धारा 278 के तहत प्रशासन पत्र के अनुदान के लिये दिनांक 07.08.2002 को याचिका दायर की गई, इसलिये वह परिसीमा विधि द्वारा बाधित थी। विद्वान अति. जिला न्यायाधीश ने अधिनियम 232 का हवाला देते हुये यह अवधारित किया कि वादकारण प्रतिवादी सं. 1 से 3 के पक्ष में उत्पन्न हुआ, जब 1996 की प्रोबेट याचिका सं. 22 श्रीमति निर्मलजीत कौर प्रतिवादी सं.5 के द्वारा 09.08.1999 को वापिस ले ली गई थी, इसलिये प्रशासन

पत्र देने के लिये याचिका 07.08.2002 को दायर की गई थी जो तीन साल के भीतर दायर की थी, जो समयावधि में थी।

05. आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी। अपीलकर्ता का यह तर्क था कि परिसीमा अधि. 1963 (संक्षेप में अधि.) का अनुच्छेद 137 लागू होता था। यह प्रस्तुत किया गया था कि परिसीमा अधि. के अनुच्छेद 137 का स्पष्ट अनुप्रयोग है, और प्रशासन पत्र देने के लिये आवेदन निर्धारित समय से परे दायर किया गया था।

06. उच्च न्यायालय ने यह पाया कि परिसीमा अधि. का अनुच्छेद 137 प्रोबेट/प्रशासन पत्रों को देने की कार्यवाही पर लागू नही होता और इसीलिये विद्वान अति. जिला न्यायाधीश का दृष्टिकोण सही था। एस.एस.लाल बनाम विष्णु मित्तल गोयल {112(2004)डीएलटीए 77} के मामले में दिल्ली उच्च की एक खंडपीठ पर भरोसा रखा गया था।

07. उच्च न्यायालय ने कहा कि इसमें कोई विवाद नही है कि श्रीमति निर्मल कौर ने वसीयत दिनांक 09.09.1991 के संबंध में प्रोबेट देने के लिये जिला न्यायाधीश की अदालत में प्रोबेट याचिका दायर की थी, जिसे 1996 में प्रोबेट केस क्रम सं. 22 के रूप में क्रमांकित किया गया था। मोहिन्दर सिंह की मृत्यु के पश्चात उक्त याचिका को 09.08.1999 में वापिस ले लिया गया था। आवेदन में, आवेदनों के रूप में स्थानांतरित होने के लिये वर्तमान प्रतिवादी सं. 1 से 3 के द्वारा एक आवेदन दायर किया गया था, लेकिन उक्त आवेदन को वर्तमान प्रतिवादी सं. 1 से 3 को उचित कार्यवाही शुरू करने के अधिकार एवं स्वतंत्रता देते हुये खारिज कर दिया गया था।

08. अपील के समर्थन में अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय का यह विचार कि, परिसीमा अधि. का अनुच्छेद 137 लागू नही था, गलत है। यह प्रस्तुत किया गया कि वसीयत की वास्तविकता के बारे में विवाद होने

पर अनुच्छेद 137 के संदर्भ में आवेदन का अधिकार प्राप्त होता है। इसलिये यह प्रस्तुत किया गया कि उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण स्पष्टतः अस्थिर है।

09. दूसरी और उत्तरदाताओं के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि प्रशासन पत्र के अनुदान के लिये आवेदन करने का अधिकार सतत् अधिकार है और प्रारंभिक बिन्दु किसी घटना का घटित होना है।

मौजूदा मामले में, प्रोबेट देने के लिये याचिका वापिस लेने के बाद यह घटना सामने आई। इसके अलावा वापिस लेने की अनुमति देते हुये प्रतिवादी सं.1 से 3 को उचित कार्यवाही शुरू करने की स्वतंत्रता दी गई।

10. इस अपील में दो प्रश्नों को संबोधित किये जाने की आवश्यकता है। पहला-परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 137 के प्रयोज्यता के बारे में एवं दूसरा- यह लागू होने पर, क्या याचिका समय के भीतर थी।

11. केरल राज्य विद्युत बोर्ड, त्रिवेन्द्रम बनाम टी.पी. कुन्हालिउम्मा {1976(4) एससीसी 634} के मामले में, इसे अन्य बातों के साथ इस प्रकार माना गया।

> ''18. परिसीमा अधिनियम 1963 के अनुच्छेद 137 में विभाजन के परिवर्तन के साथ-साथ 1908 परिसीमा अधि. के अनुच्छेद 181 की तुलना में शब्दों के संयोजन में परिवर्तन से पता चलता है कि अनुच्छेद 137 के तहत विचार किये गये आवेदन सिविल प्रक्रिया संहिता तक ही सीमित नही है। परिसीमा अधि. 1908 में निर्दिष्ट मामलों में आवेदनों और परिसीमा अधि. 1963 की तरह अनुप्रयोग के बीच विभाजन नही था। अनुच्छेद 137 के तहत ''कोई अन्य आवेदन'' शब्द को एजुस्डेम जैनेरिस के सिद्धांत के तीसरे विभाजन के भाग एक में उल्लेखित के

अलावा सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत आवेदन नही कहा जा सकता है। अनुच्छेद 137 के तहत कोई अन्य आवेदन याचिका या किसी अधि. के तहत आवेदन होगा। लेकिन इसे न्यायालय में एक आवेदन होना चाहिये, क्योंकि परिसीमा अधि. 1963 की धारा 4 और 5 न्यायालय बंद होने पर निर्धारित अवधि की समाप्ति और निर्धारित अवधि के विस्तार की बात करती है। यदि, आवेदक या अपीलकर्ता न्यायालय को संतुष्ट करता है कि ऐसी अवधि में उसके पास अपील और कोई आवेदन न करने के लिये पर्याप्त कारण था।

22. हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे है कि परिसीमा अधि. 1963 का अनुच्छेद 137 किसी भी अधि. के तहत सिविल न्यायालय में दायर किसी भी याचिका या आवेदन पर लागू होगा।

ससम्मान हम इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की पीठ द्वारा अथानी नगर परिषद मामला 2 में अपनाये गये दृष्टिकोण से भिन्न राय रखते हैं और यह मानते हैं कि परिसीमा अधि. 1963 के अनुच्छेद 137 सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा या उसके तहत विचार किये गये अनुप्रयोगो तक ही सीमित नही है। वर्तमान मामले में याचिका एक न्यायालय के रूप में जिला न्यायाधीश के पास थी। यह याचिका टेलिग्राफ अधि. द्वारा न्यायिक निर्णय के लिये विचाराधीन याचिका थी। याचिका परिसीमा अधि. 1963 के अनुच्छेद 137 के तहत दायरे में आने वाला एक आवेदन है।"

12. उपरोक्त वर्णित निर्णय के अनुसार यदि कोई आवेदन सिविल न्यायालय अधि. के तहत आता है तो वह अनुच्छेद 137 के तहत आता है। अधिनियम की धारा

264 के संदर्भ में जिला न्यायाधीश को आवेदन किया जाता है। अधिनियम की धारा 2 (बीबी) जिला न्यायाधीश को प्रधान सिविल न्यायाधीश परिभाषित करती है।

13. आगे एस.एस.राठोर बनाम एम.पी.राज्य {1989 (4) एस.सी.सी 582} में परस्पर ऐसा कहा गया,

> ''5 अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा हमारे समक्ष अवशिष्ट अनुच्छेद 113 और उच्च न्यायालय के कुछ निर्णय को उल्लेखित किया गया, जहां ऐसी स्थिति में उस अनुच्छेद पर निर्भरता रखी गई थी। उन निर्णयों को प्राधिकार के अधिकार के रूप में संदर्भित करना अनावश्यक है। पियर्स लेस्ली एंड कंपनी लिमि. बनाम वायलेट औचटर लोनी वेपशेयर के मामले में यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिये कि अधिनियम के अनुच्छेद 113, पुराने अधि. 120 के अनुरूप, एक सामान्य है और उन दावों पर जिन पर अनुसूची का कोई अनुच्छेद लागू नही है, लागू होता है।"

14. परिसीमा अधि. का अनुच्छेद 137 इस प्रकार है-

> '' 137 आवेदन का विवरणः खंड में जहां पर भी किसी भी आवेदन के लिये कोई परिसीमा निर्धारित नही की गई है। परिसीमा की अवधिः तीन साल। जिस समय से अवधि प्रारंभ होती है, जब आवेदन करने का अधिकार प्राप्त होता है। अनुच्छेद 137 में महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति ''लागू करने का अधिकार'' है। इस न्यायालय के द्वारा जो कहा गया है उसके मद्येनजर, अनुच्छेद 137 स्पष्ट रूप से प्रशासन पत्र के अनुदान की याचिका पर लागू होता है। ऐसी कार्यवाहियों में आवेदन केवल न्यायालय से कर्तव्य पालन के लिये मान्यता चाहता है। क्योंकि कार्यवाहियों की प्रकृति के कारण यह एक सतत् अधिकार है। दिल्ली उच्च न्यायालय की

खंडपीठ में कई निर्णयों में निर्दिष्ट किया है, जिनमें से एक एस.कृष्णास्वामी और अन्य बनाम ई. रामैया (एआईआर 1991 मद्रास 214) के उक्त निर्णय के पैरा 17 में इस प्रकार उल्लेख किया गया है।"

"17 किसी कार्यवाही में या दूसरे शब्दों में, प्रोबेट या प्रशासन पत्र के अनुदान के लिये दायर आवेदन में, आवेदक द्वारा किसी अधिकार का दावा या दावा नही किया जाता है। आवेदन केवल कर्तव्य पालन के लिये न्यायालय से मान्यता चाहता है। सक्षम न्यायालय द्वारा जारी किया गया प्रोबेट या प्रशासन पत्र दुनिया भर में कानून चरित्र का निर्णायक प्रमाण है। भारतीय उत्तराधिकार अधि. 1925 के प्रासंगिक प्रावधान का आंकलन यह नही बताता है कि प्रोबेट या प्रशासन पत्र के लिये दायर की गई कार्यवाही में क्या तात्पर्य है, आवेदक के किसी भी अधिकार को कानुनी अर्थ में सुरक्षित या तय नही किया जाता है। वसीयतनामे के लेखक ने अपनी सम्पत्ति के प्रशासन के संबंध में कर्तव्य निर्धारित किया है और प्रोबेट या प्रशासन पत्र के लिये आवेदक केवल न्यायालय से कर्तव्य पालन के लिये अनुमति चाहता है। कर्तव्य पालन के लिये न्यायालय से केवल मान्यता चाहता है। वह कर्तव्य केवल नैतिक है, वैधानिक नही है। ऐसा कोई कानून नही है जो आवेदक को प्रोबेट या प्रशासन पत्र के लिये कार्यवाही दायर करने के लिये बाध्य करता हो। नैतिक कर्तव्य के निवर्हन की दृष्टि से आवेदक न्यायालय से कर्तव्य पालन की मान्यता चाहता है। यह निष्कर्ष निकालना वैध होगा कि प्रोबेट या प्रशासन पत्र देने के लिये की गई कार्यवाही कानुनी कार्यवाही नही है। इसलिये परिसीमा अधि. 1963 के अनुच्छेद 137 के तहत आवेदन के अर्थ में आने वाले आवेदनों

के रूप में प्रोबेट या प्रशासन पत्र देने की कार्यवाही को समझना बहुत मुश्किल है और ऐसा नही होगा।"

15. हालांकि, याचिका की प्रकृति को उच्च न्यायालय द्वारा सही वर्णित किया गया है। यह अवलोकन करना सही नही था, कि प्रोबेट या प्रशासन पत्र के अनुदान के लिये आवेदन परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 137 के तहत नही आता है। केरल राज्य विद्युत बोर्ड के मामले में जो कहा गया है उसके मद्देनजर यह सही नही है।

16. इसी तरह वासुदेव दौलतराम सदारंगानी बनाम सजनी प्रेम ललवानी के मामले में बॉम्बे हाईकोर्ट के एक निर्णय का हवाला भी दिया गया है।

पैरा 16 इस प्रकार है

श्री दलपतराय के तर्कों का खारिज करते हुये अपना निष्कर्ष संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत करता हूं-

अ. परिसीमा अधिनियम के तहत ऐसी कोई अवधि निर्धारित नही की गई है जिसके भीतर प्रोबेट, प्रशासन पत्र या उत्तराधिकार प्रमाण पत्र के लिये आवेदन किया जाना चाहिये।

ब. यह धारण की अनुच्छेद 137 के तहत आवेदन करने का अधिकार आवश्यक रूप से मृतक की मृत्यु की तारीख पर प्राप्त होता है, अनुचित है।

स. ऐसा आवेदन वसीयत द्वारा बनाये गये विधिक कर्तव्य को पूरा करने के लिये या वसीयतकर्ता, न्यायासी के रूप में मान्यता के लिये न्यायालय की अनुमति के लिये जिसका उपयोग मृतक की मृत्यु के पश्चात किसी भी समय किया जा सकता है। जब

तक ऐसा करने का अधिकार जीवित रहता है और न्यास का उद्देश्य मौजूद रहता है या न्यास का कोई हिस्सा यदि बनाया गया है, जो निष्पादित किया जाना बाकी है।

द. आवेदन करने का अधिकार तब प्राप्त होगा जब आवेदन करना आवश्यक हो जायेगा, जो आवश्यक नही कि मृत्यु की तारीख से तीन वर्ष के भीतर हो।

य. मृतक की मृत्यु के पश्चात तीन साल से अधिक की देरी संदेह उत्पन्न करेगी, जितनी ज्यादा देरी होगी, संदेह उतना ही अधिक होगा।

र. इस तरह की देरी को स्पष्ट किया जाना चाहिये, लेकिन इसे परिसीमा की पूर्ण सीमा के साथ नही जोडा जा सकता।

ल. एक बार निष्पादन और सत्यापन साबित हो जाता है तो उसके पश्चात विलंब का संदेह मान्य नही होगा।

17. निष्कर्ष ''बी'' सही नही है। जबकि निष्कर्ष ''सी'' विधि की सही स्थिति है।

18. तथ्यात्मक परिदृश्य को देखते हुये आवेदन करने का अधिकार वास्तव में 09.08.1999 को उत्पन्न हुआ, जब श्रीमति निर्मल कौर के द्वारा दायर याचिका वापिस ले ली गई। क्योंकि वह याचिका तीन साल के भीतर दायर की गई थी जो समयावधि में थी, इसलिये अपील निराधार है एवं खारिज करने योग्य है, जिसे हम परिस्थितियों के दृष्टिगत बिना कोई खर्चा अधिरोपित किये खारिज किये जाने योग्य मानते है।

अपील खारिज।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अंजू कुमारी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।